☆ भारत के अनिर्माता : जवाहरलाल नेहरू

चीन से भारत की पराजय का दायित्व

दया प्रकाश सिन्हा
आई.ए.एस. (अवकाश प्राप्त)

चीन ने भारत पर 21 अक्टूबर, 1962 को आक्रमण किया था, लेकिन इसकी नींव उसी दिन रख दी गई थी, जब 1950 में तिब्बत पर चीन ने कब्जा कर लिया था।

अंग्रेजों ने सदा ही तिब्बत को भारत की सुरक्षा के लिए भारत और चीन की सीमाओं के बीच एक रुकावट (बफ़र स्टेट) के रूप में बनाए रखा था। अंग्रेज तिब्बत पर चीन की 'सुज़ेरेनिटी' (सांकेतिक आधिपत्य) स्वीकार करते थे, किन्तु उन्होंने चीन की तिब्बत पर कभी 'सोवरिनटी' (संप्रभुता) स्वीकार नहीं की। वे तिब्बत की राजधानी ल्हासा में अपनी फौजी टुकड़ी भी रखते थे।

सितम्बर, 1949 में चीन के रेडियो प्रसारण में कहा गया :– ***"बर्तानी और अमरीकी साम्राज्यवादी और उनका पालतू कुत्ता नेहरू तिब्बत पर कब्जा करने के लिए ल्हासा में षड़यन्त्र कर रहे हैं।"***

चीन की इन गालियों का तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरू पर कोई असर नहीं पड़ा। वह एशिया के देशों का एक ऐसा संगठित दल निर्माण करना चाहते थे, जिसका वह नेतृत्व कर सकें। इसीलिए शायद भारत सरकार (विदेश मंत्रालय) ने एक पत्र द्वारा चीन को सूचित किया कि वह भारत पर चीन की 'सौवरिनटी' (संप्रभुता) स्वीकार करती है। पत्र में 'सुज़रेनिटी' के स्थान पर 'सोवरनिटी' शब्द का प्रयोग गलती से हुआ, या नेहरू योजना के अन्तर्गत, दोनों ही परिस्थितिओं में यह पत्र देश के हित के लिए घातक था। इसने चीन को तिब्बत पर आक्रमण कर, क़ब्जा करने का वैधानिक अधिकार और बहाना दे दिया। दोनों ही परिस्थितिओं में इस अपराध का दायित्व नेहरू पर बनता है।

इस पत्र के आधार पर चीन ने तिब्बत पर आक्रमण करके कब्जा कर लिया। जब भारत ने आपत्ति की तो चीन ने भारत के उपरोक्त पत्र का हवाला देते हुए तिब्बत पर कब्ज़ा करने का अपने अधिकार का हवाला दिया। साथ ही यह भी आश्वासन दिया कि तिब्बत की स्वायत्तता बरकरार रखी जाएगी, और वहां की वर्तमान व्यवस्था में धार्मिक, राजनैतिक और सामाजिक परिवर्तन नहीं किए जाएंगे। सब जानते हैं कि ऐसे आश्वसनों

का कोई अर्थ नहीं। तिब्बत के पतन और विनाश का एकमात्र कारण जवाहर लाल नेहरू की चीन के तुष्टीकरण की नीति सिद्ध हुई। तिब्बत के हादसे से भी नेहरू ने कोई सबक नहीं लिए। वह फिर भी, चीन की तुष्टि करके, एशिया के एकमात्र नेता बनने के सपनें देखते रहे।

भारत के प्रधानमंत्री और विदेशमंत्री होने के नाते, चीन के नापाक इरादों को समझना, तथा उसके अनुसार भारत के राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए कार्यवाही करना जवाहर लाल नेहरू का दायित्व था। अपने इस दायित्व के निर्वहन में वह असफल रहे। राष्ट्रीय हित की इस क्षति के बाद भी नेहरू हिन्दी–चीनी भाई–भाई का स्वर अलापते रहे।

तिब्बत पर चीन के कब्ज़े से भारत और चीन के बीच की रुकावट हट गई, और भारत पर हमला करने के लिए चीन का रास्ता साफ हो गया, जो भारत की सुरक्षा के लिए एक खतरा बन गया।,

कदाचित नेहरू में दूरदृष्टि का अभाव था, जो इस खतरे की अनदेखी कर गए। इस खतरे की ओर नेहरू का ध्यान दिलाने के लिए सरदार पटेल ने अपनी मृत्यु के ठीक पांच हफ्ते पहले 7 नवम्बर, 1950 को एक खत लिखा, जिसके कुछ महत्वपूर्ण अंश उल्लेखनीय हैं :–

"चीन सरकार ने अपने शांतिपूर्ण इरादों की बार–बार घोषणा करके हमको धोखा देने की कोशिश की है।... दुख (ट्रेज़डी) तो यह है कि तिब्बत ने हम पर विश्वास किया। उन्होंने हमारी सलाह पर चलना स्वीकार किया। और हम उनको चीनी कूटनीति या चीनी बदनियती के जाल से निकाल नहीं पाये। .... हालांकि हम अपने आपको चीन का मित्र समझते हैं, चीनी हमको अपना मित्र नहीं मानते। कम्युनिस्टों की इस मानसिकता को कि जो उनके साथ नहीं है वह उनके विरुद्ध है, हमको समझ लेना चाहिए।" *(दुर्गादासः कर्जन टू नेहरू एण्ड आफ्टर, पृष्ठ 459–63)*

यही नहीं सरदार पटेल ने अपने उपरोक्त पत्र में जवाहर लाल नेहरू को यह भी बड़े विस्तार से बताया कि चीन के खतरे से निपटने कि लिए क्या किया जाना चाहिए। उनके सुझावों में से कुछ निम्नलिखित हैं :–

1. भारत के उत्तरी पूर्वी सीमाओं जिसमें नेपाल, भूटान, सिक्किम, दार्जिलिंग और असम के उत्तरी इलाके शामिल होंगे, को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक राजनैतिक और प्रशासनिक कार्यवाही।
2. इन क्षेत्रों और वहां स्थित हमारी चौकियों से रेल, सड़क, हवाई जहाज और वाइरलेस द्वारा संचार का सुदृढ़ीकरण।
3. सीमा की चौकियों को सुरक्षा और उनसे गुप्त सूचनाएं प्राप्त करना।
4. सीमाओं पर अपनी सैनिक शक्ति पर पुनर्विचार और नए खतरों के अनुसार पुनर्गठन।

नेहरू सरकार ने सरदार पटेल द्वारा दिए गए सुझावों पर कोई कार्यवाही नहीं की। एशिया के एकमात्र नेता बनने का सपना देखते हुए, नेहरू ने हिन्दी–चीनी भाई भाई का राग अलापना चालू रखा। चीन को संयुक्त राष्ट्र का सदस्य बनाने के लिए नेहरू ने जी–जान से कोशिश की। अपने विरोधी या प्रतिद्वन्दी के हित के लिए कोई बुद्धिमान कार्य नहीं करता। फिर भी नेहरू ऐसा करते रहे। जब कभी सेना की तरफ से ऐसी कोई गुप्त सूचना मिलती कि चीन भारत पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहा है, तो नेहरू और उनके विश्वासपात्र सुरक्षामंत्री कृष्ण मेनन यह कहकर चुप बैठ जाते कि उनकी चीनी नेताओं से बात हो चुकी है, और उन्होंने आश्वासन दिया कि वे भारत पर कभी आक्रमण नहीं करेंगे। ऐसा ही आश्वासन तो चीन ने तिब्बत हड़पने के पूर्व भी दिया था। फिर भी नेहरू विश्वास करने पर अड़े थे। यह देश का दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि इतिहास के इस मौके पर ऐसा प्रधानमंत्री था, जिसकी **मतिभ्रष्ट** थी, और जो अपने पिछले कटु अनुभव से कुछ भी सीखने को तैयार नहीं था।

भारत सरकार की शर्मनाक उदासीनता :

अक्टूबर, 1961 में सेना मुख्यालय ने सुरक्षा मंत्रालय को सूचित किया कि सेना के पास चीनियों के मुकाबले में बंदूकें, टैंक तथा अन्य हथियार बहुत ही कम हैं, और सेना को आधुनिक हथियारों से लैस करने के सुझाव भी दिए। सुरक्षा मंत्रालय ने इस पत्र की पावती भी नहीं भेजी। उत्तरपूर्व सीमा पर भारत की स्थिति इतनी क्षीण थी, कि सेना मुख्यालय ने एक के बाद एक, सात पत्र सुरक्षा मंत्रालय को भेजे। सातवां पत्र जून 1962 में भेजा गया था। पढ़कर सुरक्षा मंत्री कृष्ण मेनन ने कहा कि भारत सरकार के मंत्री के लिए आवश्यक

नहीं है कि वह पत्र का उत्तर तुरन्त दे, या छह महीने बाद दे, या जब चाहें तब दें। उसे तुरन्त फैसला लेने के लिए मजबूर नहीं किया सकता।

जब वित्त मंत्री मोरारजी से सेनाध्यक्ष पी.एन. थापर ने 4 करोड़ 970 लाख रूपये की मांग सेना को आधुनिक हथियारों से सज्जित करने के लिए मांगी, तो उन्होंने इस पर सहमति देते हुए कैबिनेट की स्वीकृति मांगी। किन्तु नेहरू ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। स्वीकृति के लिए यह मामला मंत्रिमंडल के सामने रखा ही नहीं गया। जब जब इस संबंध में जनरल थापर ने नेहरू से व्यक्तिगत रूप से चर्चा की तो उन्होंने कहा कि चीन भारत पर आक्रमण नहीं करेगा। मेनन ने भी नेहरू की बात तोते की तरह दोहरा दी।

भारत पर चीन के हमले के सिर्फ दो–तीन महीने पहले भी नेहरू असलियत से अज्ञान थे। सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह था कि वह सच जानना नहीं चाहते थे। उन्होंने आंखें बन्द कर ली थीं।

इस बीच ख़बर आई कि चीन ने लद्दाख और उत्तर पूर्व (नेफा) की सीमा पर फौजी टुकड़ियों की छह डिवीजन जमा कर ली हैं, जबकि वहां कुल मिलाकर भारत की दो डिवीजन मुश्किल से हैं। चीनी हमले के लगभग एक महीने पहले डिफेन्स काउसिन्ल की बैठक में सेना के अफसरों ने बताया कि अगर चीन से युद्ध होता है, तो भारत एकदम साफ हो जाएगा।

इसी समय नेहरू के एक रिश्तेदार लेफ्टिनेंट जनरल बी.एम कौल को उत्तर पूर्व (जिसे उस समय नेफा कहते थे) का कमांडर बनाया गया। ले. जनरल कौल की सीधी पहुंच नेहरू तक थी। उन्होंने 11 अक्टूबर 1962 की मीटिंग में नेहरू तथा मेनन को बताया कि भारतीय सेना के पास न तो इतने हथियार हैं और न इतने सैनिक कि चीनियों का 'ढोला' का अवैध कब्जा हटाया जा सके। अतएव यह तय हुआ कि चीनियों को हटाने का अभियान फिलहाल रोक दिया जाए, और कुछ भी न किया जाए जिससे उनको भारत पर आक्रमण करने का बहाना मिल जाए।

किन्तु जवाहर लाल नेहरू ने उपरोक्त मीटिंग के ठीक दो दिन बाद, 13 अक्टूबर, 1962 को श्रीलंका जाते हुए, मद्रास में बयान दे डाला कि हमने अपनी सेना को आदेश दिया है कि वह *'चीन को भारतीय सीमा से निकाल फेंके।'* फैसला कुछ हुआ था, और

नेहरू जी बोल कुछ और ही गए? देश के प्रधानमंत्री द्वारा बड़ी चूक !! क्या ऐसा उनके बुढ़ापे के कारण हुआ ? क्या वह सठिया गए थे ? कारण कुछ भी हो । उसने चीन को भारत पर आक्रमण करने का बहाना दे दिया।

स्वतंत्र भारत में यह भारत की पहली पराजय थी। हर भारतवासी का सिर लज्जा और अपमान से झुक गया। भारतीय सेना जिसने दोनों विश्व युद्धों में अपनी धाक जमाई थी, क्यों हार गई ? क्या इसमें दोष सैनिकों का है था? सैनिक अधिकारियों का है था? नहीं। एकदम नहीं । दोष था तो राजनेताओं का। दोष था नेहरू का, तथा उनके परम विश्वासपात्र कृष्ण मेनन का।

लोग जब नेहरू का इस्तीफा मांगने पर उतारू हो गए, तो उन्होंने जनरल थापर और सुरक्षा मंत्री कृष्ण मेनन का इस्तीफा लेकर उन्हें बलि का बकरा बनाया, और किसी तरह अपनी जान बचाई।

प्रश्न फिर भी रहता है कि आखिर नेहरू ने देश की सुरक्षा पर ध्यान क्यों नहीं दिया ? सरदार पटेल के सुझावों को क्यों ठंडे बस्ते में डाल दिया ? इसका उत्तर खोजने हमें उस कालखण्ड में जाना होगा।

1947 में देश आजाद हुआ था। भारत ने आजाद होते ही पूरे विश्व में गांधी जी की अहिंसा का ढ़िंढोरा पीटा। सारा संसार द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका से किसी प्रकार उबरा था, अतएव उसने भारत की नैतिकता के प्रवचन और अहिंसा के संदेश को बड़े ध्यान से सुना। इससे नेहरू आदि भारत के नेताओं को गुमान हो गया कि अगर वह गांधी जी के बताए अहिंसा के संदेश को अपने व्यवहार में लायेंगे तो विश्व में सम्मान पाऐंगे। अतएव वह कोशिश करके गांधी जी के बताए मार्ग पर चलने लगे।

गांधी जी ने कहा था कि आजाद भारत का कोई शत्रु नहीं होगा। अतएव नेहरू जी के अवचेतन में यह अंकित हो गया कि भारत का कोई शत्रु नहीं हो सकता। और जब ऐसे समाचार आते कि चीन भारत पर हमला कर सकता है, तो वह उसे धुआँ समझ हवा में उड़ा देते।

गांधी जी ने अप्रैल, 1946 में लिखा कि – ***'सेना को खेतों की जुताई करनी चाहिए, कुएं खोदने चाहिए और पाखाने साफ करने चाहिए तथा अन्य रचनात्मक काम करने***

चाहिए।' *(कम्युनल यूनिटी, पृष्ठ 986, एम.एम. कोठारी, क्रिटीक आफ गांधी, क्रिटीक प्रकाशन जोधपुर, पृष्ठ 25 से उद्धृत)* दूसरे शब्दों में गांधी के भारत में सेना को युद्ध के अलावा अन्य सभी काम करने थे। उसी के अनुसार नेहरू जी भी सेना की संख्या बढ़ाने और उनको आधुनिक हथियारों से सज्जित करने के प्रति उदासीन थे। उस काल–अवधि में सेना के शस्त्र बनाने के कारखाने प्रेशर–कुकर आदि रोज की जरूरतों के सामान बना रहे थे, हथियार नहीं। नेहरू अपने को गांधी जी का असली वारिस समझते थे, अतएव अपने गुरू की शिक्षाओं पर वह निष्ठापूर्वक चल रहे थे।

स्वयं नेहरू के रिश्तेदार ले. जनरल बी एम कौल ने चीन से भारत की पराजय के लिए नेहरू जी की गांधीवादी मानसिकता को जिम्मेदार ठहराया है। उन्होंने लिखा है *:* ***"हमारे नेताओं का विष्वास था... अगर हम ब्रितानी जैसी ताकत को बिना हथियार और अहिंसा से निकाल सके, तो सेना पर व्यय करना व्यर्थ है। इस विचार से हम लोग मनोवैज्ञानिक रूप से जकड़े हुए थे। नतीजा यह हुआ कि सुरक्षा बलों को वह ध्यान नहीं दिया गया, जो दिया जाना चाहिए था .... इसलिए युद्ध के लिए तैयार नहीं थे।"***
(बी.एम कौल : अनटोल्ड स्टोरी : पृष्ठ 348–349)

सरदार पटेल ने बारह वर्ष पूर्व ही चीनियों का असली चेहरा पहचान लिया था जिसे नेहरू आखिरी समय तक नहीं पहचान सके। सरदार पटेल जैसी दूरदर्शिता का नेहरू में सवर्था अभाव था। **काश, नेहरू ने सरदार पटेल के सुझावों का अनुपालन किया होता, तो भारत को पराजय का अपमान नहीं सहना पड़ता।**

बी–255, सेक्टर–26,
नोएडा–201301
दूरभाष : 9891510230
dpsinha50@hotmail.com